भारतीय चित्रकला की पृष्टभूमि एवं क्रमिक विकास

युवराज
शोध छात्र
दृश्यकला विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
प्रयागराज

कला प्रविधि के द्वारा विकसित की जाय तो वह आनन्द और सृजन की एक नवीन प्रेरणा कलाकार को प्रदान करती है। इसी प्रेरणा के कारण चित्रकला का स्वरूप समय–समय पर परिवर्तित होता रहा है। इस प्रकार भारतीय चित्रकला निरन्तर विकासरत हैं। भारतीय चित्रकला में प्रागैतिहासिक कला अजन्ता, बाघ, एलोरा, अपभ्रंश, राजस्थानी, मुगल, पहाड़ी आदि कला शैलियों ने भिन्न–भिन्न समय पर विविध कला स्वरूपों का निर्माण किया है, अग्रेंजी शासन के पश्चात् भारतीय कला परिदृश्य में बदलाव तथा यूरोपीय कला का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। चित्रकला का यह क्रमिक विकास सृजनात्मकता व नवीनता के साथ नित् नवीन बदलते स्वरूपों को भी प्रस्तुत करता है। कला का स्वरूप समय तथा परिस्थिति के अनुसार परिवर्तित होता रहता है। अतः भारतीय चित्रकला का स्वरूप भी धार्मिक सामाजिक एवं राजनैतिक कारणों के आधार पर परिवर्तित होता रहा है। जो कि प्रागैतिहासिक काल से निरन्तर विभिन्न शैलियों के रूप में दृष्टिगत होता है।

प्रागैतिहासिक काल से ही मानव ने गुफा चित्रण प्रारम्भ कर दिया था। होशंगाबाद, मिर्जापुर, सिंघनपुर, भीमबेड़का, रायगढ़ आदि प्रागैतिहासिक गुफाओं की कलाकृतियाँ आदिम मनुष्य की कला अभिरूचि की प्राचीनता का स्पष्टीकरण प्रस्तुत करती है। जिसके माध्यम से आदिमानव की चित्रण तकनीकि का मूल्यांकन–अनुशीलन किया जा सकता है तथा तत्कालीन कलाकार की अभिव्यंजना की निपुणता को समझा जा सकता है। इन शिला चित्रों में मौलिक भावना, रूपगत विविधता, सौंदर्य बोध दिखाई पड़ता हैं, जो कि वर्तमान कलाकारों को भी प्रभावित कर रहा है। मानव सभ्यता के विकास के साथ ही वह अपने सौन्दर्य और कला प्रेम के अन्तर्निहित भावों को मूर्त रूप देने में संलग्न रहा है। वह रेखाओं और रंगों के माध्यम से अपनी अभिव्यंजना प्रस्तुत करता गया। इसके श्रेष्ठ उदाहरण सिन्धु घाटी सभ्यता के उत्खनन से प्राप्त पात्रों तथा अन्य कला सामग्री में देखे जा सकते है।

चित्रकला से ही विकसित होकर लिपि चिन्ह वर्णमाला और ग्रन्थ आदि का जन्म हुआ। भारतीय दर्शन, साहित्य तथा धार्मिक मान्यताओं की अभिव्यक्ति दृश्य कला में देखी व अनुभव की जा सकती है। प्राचीन भारतीय साहित्य में चित्रकला सम्बन्धी विस्तृत सामग्री प्राप्त होती है। वैदिक युग से ही विभिन्न ग्रन्थों में चित्रकला की चर्चा की गयी है। कला शब्द का प्रयोग ऋग्वेद में हुआ है तथा भरतमुनि के नाट्यशास्त्र में कला शब्द का यर्थाथवादी प्रयोग मिलता है। इस प्रकार के अनेक ग्रन्थ कामसूत्र, विष्णु धर्मोत्तर पुराण, रामायण, महाभारत, अष्टाध्यायी, मेघदूत, रघुवंशम्, कादम्बरी, हर्षचरित आदि अनेक प्राचीन भारतीय ग्रन्थों में चित्रकला का उल्लेख मिलता है। इन सभी ग्रन्थों के माध्यम से चित्रकला की विविध तकनीकों एवं सिद्धान्तों का शास्त्रीय ज्ञान प्राप्त होता है। भारतीय चित्रकला के विकास में समय–समय पर शासकों द्वारा प्राप्त संरक्षण की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। राजाओं का चित्रकला के प्रति मोह और लगाव के कारण राजाश्रय की यह परम्परा लम्बे अर्शे तक चलती रही और ऐतिहासिक दृष्टि से बुद्ध के बाद चित्रकला और समाज की अभिरूचि का पता चलता है। इसके शिक्षा पर भी बल दिया जाने लगा तथा चित्रकला का वर्गीकरण देव शैली, नाग शैली तथा यक्ष शैली में किया गया। मौर्य काल में सम्राट अशोक ने कला को संरक्षण देकर उन्नति के शिखर पर पहुंचाया, अशोक के समय यक्ष शैली तथा नागार्जुन के समय नाग शैली का विकास हुआ। इसके साथ ही भित्ति चित्रण परम्परा का आविर्भाव हुआ, जिसके प्रथम साक्ष्य जोगीमारा से तथा शुंग, सातवाहन, गुप्त, वाकाटक राजाओं के काल में बनी अजन्ता की गुफाओं की चित्रकारी आज भी कला जगत के पृष्ठ पर अमिट छाप छोड़ती है। अजन्ता के समान ही भित्ति

चित्रण परम्परा हम बाघ, बादामी, सित्तनवासन आदि गुफाओं में भी देख सकते हैं। गुप्तकाल तक चित्रकला का पूर्ण विकास हो चुका था।

मध्यकाल में चित्रकला की उन्नति तथा परम्परा को जीवित रखने का श्रेय पाल, अपभ्रंश तथा जैन शैली को जाता है। पटचित्रों की परम्परा भी इस समय प्रारम्भ हुई, इस समय ताड़पत्र, कपड़े, कागज आदि के फलक पर लघु चित्रण प्रारम्भ हुआ तथा पोथी चित्रण भी प्रमुखता के साथ हुआ है। पाल शासकों ने बौद्ध धर्म से सम्बन्धित अनेक ग्रन्थ चित्रित करवाये। अपभ्रंश या प्राकृत शैली में जैन धर्म से संबंधित चित्र बने हैं। कल्पसूत्र और कालकाचार्य की कथा पर बने तीर्थंकरों के चित्र महत्वपूर्ण हैं। कलाकारों ने उदारता के साथ मार्कण्डेय पुराण, दुर्गा सप्तशती, रतिरहस्य, कामसूत्र सम्बन्धित चित्र भी बनाये। देश में राजनीतक उथल–पुथल के कारण अक्सर बाधायें उत्पन्न हुई। मध्य युगीन भक्ति आन्दोलन और नूतन हिन्दू धर्म से प्रेरणा पाकर प्राकृत शैली आगे चलकर राजस्थानी चित्रकला के रूप में दृष्टिगोचर हुई। राजस्थानी शैली में भी अनेक धार्मिक ग्रन्थों व प्रसंगों का बहुतायत रूप से चित्रण हुआ। राजस्थान की अलग–अलग उपशैलियों की चित्रकला में भी स्थानीय शैलीगत भेद किया जा सकता है। 17वीं से 19वीं शताब्दी तक मुगल तथा राजस्थानी चित्रकला का समकालीन समय रहा है। जिसके कारण राजस्थानी चित्रकला का बाहरी आवरण एक जैसा प्रतीत होता है। यह विशेषता जयपुर शैली में प्रमुखता के साथ देखी जा सकती है। मुगलों के भारत आगमन से चित्रकला की एक नई शैली जो कि ईरानी और भारतीय शैली का मिश्रण थी, मुगल शैली के रूप में प्रदर्शित होती है। मुगल शैली के विकास में अकबर और जहाँगीर जैसे शासकों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। अकबर के समय में व्यक्ति चित्रों और लघु चित्रों को प्रोत्साहन मिला। अन्तः सौन्दर्य की अभिव्यक्ति भारतीय तथा वाह्य सौन्दर्य ईरानी शैली की देन है। जहाँगीर का काल चित्रकला का स्वर्ण काल रहा जिसमें शिकार, शबीह और दृश्य आदि अनेक विषयों पर उत्कृष्ट चित्र बनें। दक्षिण में बीजापुर गोलकुण्डा में चित्रकला की प्रतिष्ठा बनी रही। मुगल तथा राजस्थानी शैली के भाँति पहाड़ी शैली भी चित्रकला की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इसका विकास 18वीं शताब्दी में जम्मू, गढ़वाल, कुल्लू, चम्बा, बसोहली, काँगड़ा, गुलेर, मंडी आदि पहाड़ी क्षेत्रों तक रहा है।

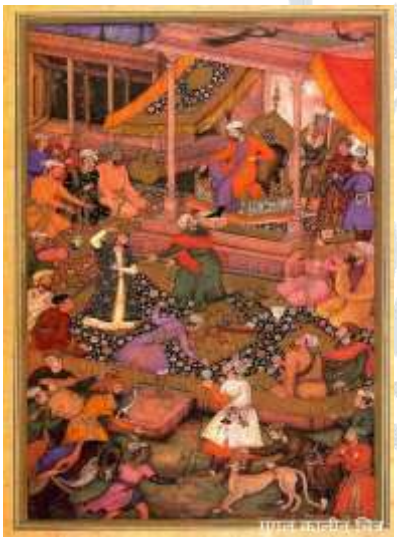

भारत में अंगेजों का आगमन मुगल सम्राट अकबर के समय से प्रारम्भ हो चुका था जिससे भारतीय चित्रकारों पर विदेशी प्रभाव पड़ना प्रारम्भ हुआ। परिवर्ती मुगल शासकों की कला के प्रति अरूचि के कारण कलाकार दिल्ली छोड़कर जाने लगे। मुगल शासन के पतन के पश्चात् अंग्रेजी शासन स्थापित हो गया। इस समय इंग्लैण्ड के चित्रकार थॉमस डेनियल तथा टिली कैटिल ने भारतीय कलाकारों को प्रभावित किया। बिहार में पटना शैली भी बहुत प्रसिद्ध रही है। इस शैली के चित्रकारों ने श्रमिक, गरीब जनता, कामकाजी व्यक्तियों को अपने चित्रण का विषय बनाया।

भारतीय तथा अंग्रेजी कलाकारों के सहयोग से एक नई शैली विकसित हुई जिसे कम्पनी शैली कहा गया। राजा रवि वर्मा प्रथम भारतीय चित्रकार थे जिन्होंने यूरोपीय तकनीकि में भारतीय विषयों का चित्रण किया। अंग्रेजों ने भारतीय कलाकारों को यूरोपीय कला तकनीकि में प्रशिक्षण देने के लिए मद्रास, कलकत्ता, लहौर, मुम्बई तथा लखनऊ में कला विद्यालय खोले।

अंग्रेजी शासन में यथार्थ शैली तैल चित्रण में कलाकारों को भ्रमा दिया कल्पना धारा रूक गई। ऐसे समय में भारतीय कला को विदेशी दाशता से मुक्त कराने के लिए अवनीन्द्र नाथ टैगोर ने नवीन कला आन्दोलन प्रारम्भ किया। भारतीय कला में पुर्नजागरण कला आन्दोलन स्थापित किया। समसमायिक कला आन्दोलन बंगाल स्कूल के नाम से विख्यात हुआ। इस आन्दोलन में साहित्यकारों, विचारकों, समाज सुधारकों की महत्वपूर्ण भूमिका रही। कनिघंम जैसे विद्वानों ने भारतीय इतिहास एवं पुरातत्व के लिए खोज कार्य किया। इण्डियन एसोसिएशन की स्थापना हुई। अवनीन्द्र नाथ ने कला में प्राचीनता एवं आधुनिकता के मध्य सानुपातिक समग्रता की कड़ी का विकास किया। अवनीन्द्र नाथ ने अपनी समन्वयवादी शैली से प्राचीनता एवं आधुनिकता के बीच एक कड़ी स्थापित की। इस समय के विद्वान पारसी

ब्राउन, डॉ0 आनन्द कुमार स्वामी, रवीन्द्र नाथ टैगोर, ई0बी0 हैबेल और हैनरिख जिम्मर आदि जिन्होंने कला वैभव को नई सजीवता से उद्घाटित किया। ई0बी0 हैबेल ने प्राचीन चित्र शैलियों की सूक्षमताओं को पहचान कर भारतीय कला के मौलिक तथ्यों को उजागर किया। अवनी बाबू के शिष्य नन्दलाल बोस, असित कुमार हल्दार, क्षितीन्द्रनाथ मजूमदार, के0 वेंकटप्पा और शैलेन्द्र नाथ डे आदि ने देश के विभिन्न भागों में कला का प्रचार–प्रसार किया। कला के विकास के चरण में भारतीय कलाकारों के विदेश भ्रमण के कारण यूरोपीय शैलियों का आदान–प्रदान हुआ जिसका प्रभाव गगनेन्द्र नाथ की घनवादी शैली और रवीन्द्रनाथ की अभिव्यंजनात्मक शैली में देखा जा सकता है। अमृता शेरगिल ने भारत आकर समसामयिक कला को अधिक सम्बल प्रदान किया, जबकि यामिनी राय ने बंगाल की लोक कला के आधार पर नवीन शैली का विकास किया।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् कला के विकास में अधिक गति आई। इस समय अनेक कला संगठन कलकत्ता ग्रुप, शिल्पी चक्र और प्रोग्रेसिव आर्टिस्ट ग्रुप आदि बनें। 1954 में राष्ट्रीय ललित कला अकादमी की स्थापना के साथ ही राष्ट्रीय आधुनिक कला दीर्घा की स्थापना हुई तथा 1955 ई0 में प्रथम राष्ट्रीय कला प्रदर्शनी आयोजित हुई जिससे तत्कालीन कलाकार को प्रोत्साहन मिला। यह संस्थान निरन्तर कार्यरत है। कलाकार अनेक यूरोपीय धाराओं, प्रभाववाद, घनवाद, अभिव्यंजनावाद और अतियर्थाथवाद आदि से प्रभावित हो रहे हैं। 80 के दशक से आधुनिक भारतीय कला में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ। इस समय नई अर्न्तदृष्टि अभिव्यक्ति तथा नवीन शैलियाँ विकसित हुई। अभिव्यक्ति में व्यक्तिवादिता, मौलिक प्रतीक, सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक पक्षों में मिश्रित रूप के प्रयोग पर बल दिया जाने लगा। इस समय की प्रयोगधर्मिता रूपाकारों की खोज, तकनीकि तथा माध्यम की विविधता निरन्तर विकसित होने लगी जो कि अनवरत चल रही है।

90 के दशक से कला में नई दृष्टि अभिव्यक्ति तथा प्रवृत्तियाँ विकसित हुई। चित्रकार अमूर्तता की ओर से बढ़ने लगा। चित्रकार देश की सीमा लांघ कर अन्तर्राष्ट्रीय फलक पर अपनी पहचान बनाने लगा। चित्रकार कला बाजार से भी जुड़ गया जिससे उसका नाम मूल्यवान चित्रकार की श्रेणी में स्थापित होने लगा। इस समय के चित्रकारों के नाम असीमित हैं परन्तु प्रमुख रूप से एम0एफ0 हुसैन, सूजा, रजा, बेन्द्रे, गायतेंडे, सतीश गुजराल, जतिनदास, जोगेने चौधरी, जी0आर0 सन्तोष और तैयब मेहता का नाम लिया जा सकता है जिन्होने अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ख्याति प्राप्त की है।

समसामयिक कला किसी शैली में नहीं बधी हैं। कलाकार स्वच्छन्द रूप से निरूपण सरलीकरण, कलागत तत्वों के प्रति संवेदनशील है। वर्तमान में कला के उत्थान के लिए सरकारी तथा गैरसरकारी संस्थान, दीर्घाएं अपना योगदान प्रदान कर रही हैं। नये माध्यमों के द्वारा कला प्रदर्शनकारी बन गई है। जिसमें दर्शकों की भागीदारी आवश्यक है।

1980 के दशक से इन्स्टॉलेशन, कांसेप्चुअल आर्ट की प्रवृत्तियों की तरफ रूझान बढ़ा। इसके साथ ही परम्परा का निर्वाहन भारत की कला में स्पष्ट दिखाई देता है। पारम्परिक लोक व जनजातीय कला में अपनी जड़ों को तलाशने की प्रवृत्ति भी लोकप्रिय हो रही है। वर्तमान कला में नवाचार और परम्परा के बीच संभाषण हो रहा है। वर्तमान में भारतीय कला उन्नति सांस्कृतिक परम्पराओं के बीच अपनी निरन्तरता बनाये हुए है।

आज की कला नये सांस्कृतिक विकास का सूचक है। रूपाकार सम्बन्धित समस्याओं पर इतना अधिक ध्यान दिया जा रहा है कि कलाकृतियाँ, प्रयोगशालाओं के अनुभवों की तरह लगने लगती हैं। यर्थाथता से प्रारम्भ होकर प्रकृतिवाद अमूर्तन और फिर निर्वस्तुवाद के मध्य विकास की यह एक सामान्य रेखा देखी जा सकती है। पुरातन परम्पराओं से हटकर रूपाकार विहीनता के बन्धन को तोड़ने का प्रयास भी दिखाई पड़ता है। समकालीन कलाओं ने वस्तुतः कलाकार की विषयवस्तु और उसके दृष्टिकोण को विस्तृत कर दिया है। आधुनिक कला का विकास क्रम आकृति मूलक से आकृति विहीन की ओर रहा है। वर्तमान भारतीय चित्रकला में बौद्धिक पक्ष महत्वपूर्ण हो गया है।

सन्दर्भ–ग्रन्थ–सूची

1– भारत की समकालीन कला– एक परिप्रेक्ष्य– प्राणनाथ मागो (नेशनल बुक ट्रस्ट–इंडिया)।

2– समकालीन भारतीय कला– डॉ ममता चतुर्वेदी (राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी)।

3– कला विलास, भारतीय चित्रकला का विवेचन– आर0ए0 अग्रवाल, इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस मेरठ।

4– कला त्रैमासिक अंक 38– राज्य ललित कला अकादमी उ0प्र0।

5– भारतीय चित्रकला– वाचस्पति गैरोला, मित्र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड इलाहाबाद।

6– भारतीय चित्रकला का इतिहास– डॉ0 अविनाश बहादुर वर्मा, प्रकाश बुक डिपो।